International Journal of Sanskrit Research 2021; 7(1): 233-235

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2021; 7(1): 233-235
© 2021 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 25-10-2020
Accepted: 07-11-2020

डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
डॉ० मोहन लाल
सहायक आचार्य, संस्कृत राजकीय कन्या महाविद्यालय, शिमला, हिमाचल प्रदेश, भारत

पुराणानुसार गणेश का गजानन–संयोजन : एक रहस्य

डॉ० मोहन लाल

सारांश :–
गजानन–संयोजन विषयक वर्णन शिव और ब्रह्मवैवर्तपुराणों में प्राप्त होता है। शिवपुराणानुसार शिव ने कहा कि लोकमंगलार्थ ही उन्हें कार्य करना चाहिए, अतः उन सबको उत्तर दिशा में गमन करने पर सर्वप्रथम जो प्राणी मिले उसका सिर लाकर गणेश के शरीर के साथ योजित करना चाहिए। ब्रह्मवैवर्तपुराण में गणेश को गजानन नाम से अभिहित किया गया है। इस पुराण में श्री गणेश में गजमुख को योजित करने का कारणोल्लिखित है। नारद ने निज मन में संशय रखते हुए नारायण से प्रश्न किया कि जब हरि अंश की शिवसुतरूपेण प्रादुर्भूति हुई थी और तब उसके बुद्धिवैभव, तेज और पराक्रम में भी हरितुल्य होने पर भी उस त्रिलोकीस्वामीतनय में गजानन के योजित होने का कारण क्या था? नारद ने नारायण से आगे कहा कि नानाविध जन्तुओं के विद्यमान होने पर भी हाथी के मुख के संयोजन का कारण जानने के लिए वह अत्यंत उत्सुक थे।

सारः– गणेश का गजानन, ब्रह्मवैवर्तपुराणों, त्रिलोकीस्वामीतनय

प्रस्तावना

शिव–पुराण

शिवपुराण में गजानन–संयोजन प्रसंग में विधाता ने महर्षि नारद से कहा कि उनके वचनों का श्रवण करने के उपरान्त भक्तानुग्रहकारक शंकर उस बालक (गणेश) से युद्ध करने के इच्छुक हुए। विष्णु का आह्वान और उनके साथ मंत्रणा करके भारी सेना से युक्त होकर वह त्रिलोचन महादेव युद्ध में उस गण के सम्मुख गए। महापराक्रमी, महोत्साही और शिवसदृष्टि से अवलोकित देवों ने शिवपदाम्बुज का स्मरण कर उनके साथ युद्ध किया। महादेव्यायुध, वीर, निपुण, शिवरूपक और महाबलपराक्रमी हरि ने भी उस से युद्ध किया। युद्ध में वीर और शक्तिदत्तमहाबलयुक्त गणाधिप ने सहसा यष्टि से हरि और देवपुङ्गवों पर प्रहार किया। उसके द्वारा यष्टि से आहत विकुण्ठित बल वाले समस्त देव युद्ध से पराङ्मुख हो गए। महेश भी सैन्यसहित चिरकालपर्यन्त उस बालक से युद्ध करके उसके अत्यन्त विकराल रूप को देखकर अत्यधिक आश्चर्यान्वित हुए। ''छलपूर्वक ही उस गण का हनन करना चाहिए अन्यथा वह नहीं मारा जा रहा है''–एवंविध विचार कर शिव सेना के मध्य स्थित हो गए। निर्गुण शिव के दिखने एवं सगुण विष्णु के समर में उपस्थित होने पर समस्त देव और महेश के गण अतीव प्रसन्न हुए। सब ने परस्पर प्रीतिपूर्वक मिल कर महोत्सव मनाया।[1]

तदनन्तर वीर शक्तिपुत्र ने वीरगति से स्वयष्टि से सर्वसुखप्रदाता विष्णु का सर्वप्रथम पूजन किया। विष्णु ने कहा कि वह उसे मोहित करेंगे तथा शिव द्वारा उसका संहार किया जाना चाहिए क्योंकि वह तमोगुणयुक्त दुरासद बिना छल के वध्य था ही नहीं–ऐसा विचार कर और शंभु के साथ सुमंत्रणा कर विष्णु शैवी आज्ञा प्राप्त कर मोहपरायण हो गए। शक्तिद्वय एवं (मोहपरायण) विष्णु को तथाविध लीन देखकर उस गणेश को शक्ति (गौरी) ने बल प्रदान किया। विष्णु के स्वयं संस्थित होने के स्थान पर शक्तिद्वय के संलीन होने पर बलवत्तर गणाधिप ने परिघ प्रक्षिप्त किया। विष्णु ने निजस्वामी भक्तवत्सल शिव का स्मरण कर सायास कठिनतापूर्वक उस की गति (प्रहार) को निवारित किया। एक ओर से उसका मुखावलोकन कर क्रोधित शिव समरेच्छा से स्वत्रिशूल लेकर प्रविष्ट हुए। उस समय वीर और महाबली शिवासुत द्वारा निजहननार्थागत शूलपाणि शंभु का अवलोकन किया गया। पार्वती की शक्ति से प्रवृद्ध महावीर गणेश ने मातृ–चरण–कमलों का स्मरण कर शिव के हस्त पर शक्ति से प्रहार किया। परमात्मा शिव के हस्त से उस गिरे हुए त्रिशूल को देखकर सदूतिक ने उस पिनाक धनुष को धारण किया। गणेश्वर ने परिघ से उसे भी पृथ्वी पर गिरा दिया। उन्होंने प०चकरों से शूल ग्रहण करके शिव के प०च हस्तों पर प्रहार किया। शिव कहने (सोचने) लगे कि उनके लिए उसे पराजित करना इतना कठिन हो गया था तो गणों की क्या दशा होगी। तत्पश्चात् शक्तिदत्तबलान्वित वीर गणेश्वर ने परिघ से समस्त गणों सहित देवों पर प्रहार किया। परिघार्दित देवों एवं गणों ने दश दिशाओं की ओर प्रस्थान किया। जब उस अद्भुतप्रहारकर्ता के समक्ष समर में कोई भी स्थित रहने में समर्थ नहीं हुआ, तब विष्णु ने उस महाबली, महावीर, महाशूर एवं युद्धप्रिय गण को धन्य कहा। उन्होंने कहा कि उनके द्वारा बहुसंख्यक देवता, दानव, अनेक दैत्य, यक्ष, गन्धर्व एवं राक्षसों का अवलोकन किया गया था परन्तु अखिल त्रिलोकी में तेज, रूप, शौर्यादि गुणों से उस गणनाथ के सदृश कोई भी नहीं थे।[2]

एवंविध कथन करने वाले विष्णु पर परिघ को घुमाते हुए शक्तिपुत्र गणेश्वर द्वारा परिघ प्रक्षिप्त किया गया। हरि ने सुदर्शन चक्र धारण करने के अनन्तर शिवचरणाम्बुज का स्मरण कर उस चक्र से परिघ को आशु ही खण्डित कर दिया। गण द्वारा हरि पर प्रक्षिप्त परिघ के खण्ड (टुकड़े) को पकड़कर पक्षिराज गरुड़ द्वारा विफल कर दिया गया। एवंविध काल के व्यतीत होने पर विष्णु और गण–दोनों महावीर परस्पर युद्ध में प्रवृत्त रहे। पुनः महाबली शक्तिपुत्र ने अतुलनीया यष्टि लेकर विष्णु पर प्रहार किया। उस दुःसह प्रहार से विष्णु भूमि पर गिर गए, शीघ्र ही वह उठकर उमासुत के साथ युद्ध करने लगे। तत्पश्चात् शूलपाणि ने उत्तरदिशा में आकर त्रिशूल से गणेश्वर के शिर का कर्तन कर दिया। प्रस्तुत पुराण में ब्रह्मा ने कहा कि गणनाथ के शिर के छिन्न हो जाने पर गण तथा देवसेना सुनिश्चल हो गई। तब नारद ने देवी से सम्पूर्ण वृत्तान्त का निवेदन किया। उन्होंने मानिनी को मान का त्याग नहीं करने के लिए कहा। एवंविध कथन कर कलहप्रिय, अविकारी और सदैव शंभुमनोगतिकर नारद अन्तर्हित हो गए।[3]

तत्पश्चात् नारद ने ब्रह्मा से प्रश्न किया कि उस वृत्तान्त के सुनने पर महादेवी द्वारा जो किया गया उसका वह तत्त्वतः श्रवण करने के इच्छुक थे। ब्रह्मा ने मुनिश्रेष्ठ से जगदम्बा के ध्रुव चरित्र और तत्पश्चात् उनके द्वारा जो किया गया उसे श्रवण करने हेतु कहा। उन्होंने वर्णन किया कि गणपति के हननोपरान्त शिवगणों ने मृदंग एवं पटह बजाते हुए महोत्सव मनाया। शिव द्वारा गणेशशिरश्छेदनोद्भव दुःख से अत्यंत क्रोधित गिरिजा देवी असमंजस में थी कि उन्हें क्या करना चाहिए और दुःख निवारणार्थ कहाँ जाना चाहिए। केन विधिना दुःख का विनाश होगा। उन्होंने आगे कहा कि वह निजसुतघातक समस्त देवों एवं गणों को नष्ट कर प्रलयोत्पत्ति करेंगी। एवंविधिना दुःखिता सर्वलोकमहेश्वरी उमा द्वारा क्रुध होकर तत्क्षण ही शतसहस्रसंख्यक शक्तियों का सृजन किया गया। शिवासृजित जाज्वल्यमान शक्तियों ने जगदम्बा गिरिजा को नमस्कार करके स्वकर्म करने हेतु आदेश की याचना की। यह सुनकर क्रोधपरायण शंभुशक्ति महामाया ने कहा कि उनके आदेशानुसार विचार न करके उनके द्वारा प्रलय किया जाना चाहिए। उन्हें अपने एवं पराये, देव, ऋषि, यक्ष और राक्षस सबका हठात् भक्षण करना चाहिए। ब्रह्मा ने कहा कि शिवा द्वारा आदिष्ट सभी शक्तियाँ क्रोधतत्पर होकर देवादि सबके संहारार्थ उद्यत हो गई। यथा अग्नि तृण का संहार करती है, तथैव वे सभी शक्तियाँ संहारार्थ तत्पर हो गई। गणप, विष्णु, ब्रह्मा, शंकर इन्द्र, यक्षराज, स्कन्द और सूर्यादि सभी का निरन्तर संहार करने लगीं। जिधर भी दृष्टि पड़ती थी, वहाँ शक्तियाँ ही शक्तियाँ व्याप्त थीं। कराली, कुब्जका, खंजा और लम्बशीर्षा–अनेकविध शक्तियाँ देवों को हाथ में लेकर मुख में निक्षिप्त कर रहीं थीं। उस संहार का अवलोकन कर महेश, ब्रह्मा, हरि, इन्द्रादि समस्त देवगण और ऋषियों की जीवनाशा नष्ट हो गई और संशय उत्पन्न हुआ कि क्या देवी द्वारा उन सभी का असमय में ही संहार कर दिया जाएगा।[4]

तत्पश्चात् जीवनाशेच्छुक सभी ने मिलकर तुरंत ही परस्पर विचार कर यह निश्चय किया कि यदि गिरिजा देवी किसी विधि से प्रसन्न हो सकें, तभी स्वास्थ्य होगा अन्यथा कोटियत्नतः भी नहीं। दुःख को प्राप्त और नाना लीला विशारद शंकर ने भी सभी को मोहित करते हुए लौकिकी गति का आश्रय लिया। भग्नकटि समस्त देवों में क्रोधमयी शिवा के साक्षात् समक्ष जाने का उत्साह नहीं हुआ। स्वकीय अथवा परकीय, देवता अथवा दानव, गण, अथवा दिक्पाल, यक्ष अथवा किन्नर, विष्णु अथवा ब्रह्मा तथा प्रभु शंकर कोई भी गिरिजा के समक्ष स्थित रहने में समर्थ नहीं थे। उनके जाज्वल्यमान सर्वतः दहन करने वाले तेज को देखकर सभी अत्यधिक भयग्रस्त देव दूर ही स्थित थे। ब्रह्मा ने बतलाया कि उस समय दिव्यदर्शन नारद देवों के सुखहेतु वहाँ प्रविष्ट हुए। तब उनके द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और शंकर को प्रमाण करके कहा गया कि सबके द्वारा मिलकर विचारपूर्वक कार्य किया जाना चाहिए। सभी देवों ने महात्मा नारद से संमंत्रणा की तथा दुःखशांति–हेतु विचार किया कि जब तक गिरिजा देवी की कृपा नहीं होगी, तब तक सुख–प्राप्ति नहीं हो सकती। नारदादि सभी ऋषि शिवा के पास गए और उन्हें प्रसन्न करने लगे। उनकी क्रोध–शांति–हेतु स्तोत्रों से अनेक बार उनकी स्तुति करके प्रणाम किया। सब सुरर्षियों ने उन्हें प्रसन्न करते हुए देवादेश से प्रीतिपूर्वक जगदम्बा, शिवा, चण्डिका, कल्याणी, आदिशक्ति और अंबा, संबोधित करके उन्हें सर्वसृष्टिकरी, पालिनी शक्ति और प्रलयंकरी कहा। पुनः पुनः प्रणाम करते हुए उनसे प्रसन्न होने और शांति प्रदान करने हेतु प्रार्थना की क्योंकि उनके कोप से सकल त्रिभुवन विकलता को प्राप्त हो गया था।[5]

ब्रह्मा ने बताया कि ऋषि आदियों द्वारा एवंविध स्तुत क्रोध से देखते हुए शिवा ने किञ्चिदपि नहीं कहा। तब सभी ऋषियों ने उनके चरणकमलों में प्रणाम कर पुनः भक्तिपूर्वक अ०जलिबद्ध होकर उनसे क्षमा याचना करते हुए कहा कि उस समय संहार चरम सीमा को छू रहा था। उनके अनुसार उन्हें वहाँ संस्थित स्वस्वामी की ओर तो देखना चाहिए। उनके अतिरिक्त समस्त देवता, विष्णु, ब्रह्मा और उनकी प्रजाएं उनके समक्ष हाथ जोड़कर स्थित थे। उन्होंने देवी से सभी के अपराधों को क्षमा करने और उन सभी व्याकुलों को शान्ति प्रदान करने हेतु प्रार्थना की। ब्रह्मा का विचार था कि इस प्रकार कह कर समस्त व्याकुल ऋषिवर अत्यन्त दीनतापूर्वक बद्धहस्त होकर चण्डिका के सम्मुख संस्थित हो गए। तत्पश्चात् उनके वचनों का श्रवण कर चण्डिका प्रसन्न हुई और करुणाविष्ट मन से ऋषिश्रेष्ठों से कहने लगी कि यदि उनका वह मृत पुत्र जीवित हो जाये और उन सब के मध्य में पूजित हो, तब संहरण नहीं होगा। उन्हें सर्वाध्यक्ष बनाया जाएगा, तभी लोक में शान्ति होगी अन्यथा वे सुख की प्राप्ति नहीं कर पाएंगे। देवी के कथनानन्तर नारदादि सभी ऋषियों ने उन देवों से आकर समस्त वृत्तान्त का निवेदन किया। शक्रप्रभृति सभी देवों ने यह सब श्रवण करके अ०जलिबद्ध होकर शंभु से कहा। सुरों से सब कुछ श्रवणकर शिव ने कहा कि लोकमंगलार्थ ही उन्हें कार्य करना चाहिए, अतः उन सबको उत्तर दिशा में गमन करने पर सर्वप्रथम जो प्राणी मिले उसका सिर लाकर गणेश के शरीर के साथ योजित करना चाहिए।[6]

ब्रह्मा ने नारद को बताया कि शिवाज्ञाप्रतिपालक उन सब के द्वारा कलेवर लाकर विधिवत् उसका प्रक्षालन एवं पूजा करने के उपरान्त उत्तराभिमुख होने पर उन्हें सर्वप्रथम एक दन्तक हस्ती प्राप्त हुआ। उसके शिर को लाकर उन्होंने उसे संयोजित कर दिया। उसके संयोजनानन्तर समस्त देवों ने विधिपूर्वक शिव और विष्णु को प्रणाम करके कहा कि उनके द्वारा शिवोक्त कर दिया गया था, अतः अधुना शिव द्वारा शेष कार्य किया जाना चाहिए। तत्पश्चात् सुर एवं पार्षद सुखपूर्वक विराजमान हुए। तदनन्तर उनके वचन सुन कर ब्रह्मा, विष्णु और सुरों ने स्वप्रभु निर्गुण ईश शिव को प्रणाम करके कहा कि जिस उन महात्मा के तेज से वे सभी उत्पन्न हुए थे, वही उनका तेज वेदमन्त्रों के अभियोग से वहाँ आना चाहिए। इस प्रकार उन्होंने मिलकर अभिमन्त्र से मंत्रित उत्तम जल शिव का स्मरण कर उस (गणेश) के कलेवर पर छिड़का। उस जल के स्पर्शमात्र से शीघ्र ही वह जीवित हो गया। शिवेच्छावशात् सुप्त हुआ सा वह बालक जागा। वह बालक सुभग, अतिसुन्दर, गजमुख, रक्तवर्ण, अतीव सुप्रभ, प्रसन्नवदन एवं ललिताकृतियुक्त था। ब्रह्मा ने मुनिप्रवर नारद से कहा कि उस शिवापुत्र को जीवित देखकर सभी अत्यन्त मुदित हुए और उनका सब दुःख क्षय को प्राप्त हो गया। सभी ने हर्षान्वित होकर उसे देवी को दिखाया। जीवित पुत्र को देखकर देवी अत्यन्त हर्षित हुई।[7]

ब्रह्मवैवर्तपुराण

ब्रह्मवैवर्तपुराण में गणेश का गजमुख होना एक विचित्र घटना का परिणाम है। इस पुराण में गणेश के शिशुरूप के अवलोकनार्थ सूर्यपुत्र शनैश्चर का आगमन और निजपत्नी द्वारा शापग्रस्त होने के कारण उनके अधोदृष्टि होने का वर्णन प्राप्त होता है। शनैश्चर को प्रदत्त शाप–वृत्तान्त का श्रवण करने के अनन्तर दुर्गा ने परमेश्वर विष्णु का स्मरण किया और यह कहा कि सम्पूर्ण जगत् ईश्वरेच्छाधीन है। तत्पश्चात् भाग्यवशीभूता माता पार्वती द्वारा कौतूहलवशात् शनि को उनके तथा निज शिशु के दर्शनार्थानुमति प्रदान कर दी गई। तदनन्तर पार्वती के वचनों को सुनकर शनैश्चर के मन में यह द्वन्द्व मचा कि ऐसा करने पर निश्चय ही विघ्नोत्पत्ति होगी। इस प्रकार कह कर धर्मिष्ठ शनैश्चर ने धर्म को साक्षी मानकर बालक को देखने का मन तो बना लिया किन्तु उसकी माता को देखने का नहीं। शनैश्चर पहले ही खिन्नमानसयुक्त हो गये और साथ ही उनके कण्ठ, ओष्ठ और तालु भी शुष्क हो गए।[8] फिर भी उन्होंने सव्यलोचनापांग से शिशुमुख पर दृष्टिपात किया। शनि की दृष्टि पड़ते ही शिशु का मस्तक कट कर शरीर से पृथक् हो गया। शनैश्चर चक्षुओं को निमीलित करके और नम्रानन होकर स्थित रहे।[9] तत्पश्चात् शिवसुत का रक्तरञ्जित तन तो पार्वती की क्रोड़ में स्थित रहा, परन्तु मस्तक अपने ईप्सित गोलोक में जाकर कृष्ण में प्रविष्ट हो गया। यह सब देखकर देवी ने बालक को वक्षःस्थल से लगाकर पुनः–पुनः अत्यधिक विलाप करना प्रारम्भ कर दिया और वह उन्मत्ता के सदृश पृथ्वी पर गिरकर मूर्च्छित हो गई। उस स्थल पर विद्यमान देव, देवियां, शैल, गन्धर्व और समस्त कैलाशवासी चित्रपुत्तलिकासदृश आश्चर्यान्वित हो गए।[10]

ब्रह्मवैवर्तपुराण में आगे वर्णन आया है कि उन सबको अचेतनावस्था में देखकर हरि गरुड़ पर आरूढ़ होकर उत्तर दिशा में स्थित पुष्पभद्रा नामक स्थान पर गए। पुष्पभद्रा नदी के तीर पर उन्होंने वन में स्थित हस्तिनीयुक्त और निद्रा के वशीभूत हुए गजराज का अवलोकन किया। वह चारों ओर से निज शावकों से परिवृत था और उसका मन परमानन्दपूरित था। वह रम्य सुरतश्रमवशात् मूर्च्छित था। शीघ्र ही विष्णु द्वारा सुदर्शन चक्र से उसका शिरोच्छेदन कर दिया गया और वह कटा हुआ रुधिर से सना हुआ मनोहर मस्तक उनके द्वारा हर्षातिरेकपूर्वक गरुड़ पर स्थापित किया गया। गज के छिन्नाङ्ग के विक्षेप से हथिनी की निद्रा भंग हो गई। तब अशुभ शब्द करते हुए उसने अपने बच्चों को भी जगाया। शोकातुर होकर वह शावकों के साथ रुदन करने लगी। तत्पश्चात् उसने कमलाकान्त, शान्त, शंख, चक्र, गदा और पद्मधर्ता, पीताम्बर, परात्पर, जगत्कान्त, निषेक का खण्डन करने में सक्षम, निषेकजनक, विभु, निषेक–भोगदाता, भोग के विस्तारकारण गरुड़स्थ होकर सुदर्शन घुमाने वाले और स्मितान्वित ईश्वर की स्तुति की। हथिनी के स्तवन से संतुष्ट प्रभु द्वारा उसे वर प्रदान किया गया और अन्य गज का शिर धड़ से पृथक कर छिन्नमस्तक हस्ती के तन में योजित किया गया। गज पर मस्तक योजित करने पर सर्वज्ञ परमेश्वर ने ब्रह्मज्ञान द्वारा उसे जीवित कर दिया। परमेश्वर द्वारा अपने पादपंकजों को गज के सम्पूर्ण शरीर पर संयोजित करते हुए उसे सपरिवार कल्पपर्यन्त जीवित रहने का वरदान भी दिया गया। यह कहकर मनसदृशवेगशाली विष्णु शीघ्र ही शिवसदन कैलाश पर जा पहुंचे। वहाँ उनके द्वारा पार्वती के हाथों से उस बालक को लेकर निज वक्षःस्थल से लगाकर उस रुचिर गज–सिर को शिशु के शरीर से योजित कर दिया गया। ब्रह्मस्वरूप भगवान् द्वारा ब्रह्मज्ञान की लीला से हुंकारोच्चारणपूर्वक शीघ्र ही बालक को जीवन प्रदान कर दिया गया। पार्वती को सचेत करके कृष्ण ने शिशु को गोदी में रखकर आध्यात्मिक विबोधन (ज्ञान) से गौरी को प्रबोधित किया।[11]

ब्रह्मवैवर्तपुराण में गणेश को गजानन नाम से अभिहित किया गया है। इस पुराण में श्री गणेश में गजमुख को योजित करने का कारणोल्लिखित है। नारद ने निज मन में संशय रखते हुए नारायण से प्रश्न किया कि जब हरि अंश की शिवसुतरूपेण प्रादुर्भूति हुई थी और तब उसके बुद्धिवैभव, तेज और पराक्रम में भी हरितुल्य होने पर भी उस त्रिलोकीस्वामीतनय में गजानन के योजित होने का कारण क्या था? नारद ने आगे कहा कि विघ्नहर्त्ता को जो विघ्न हुआ था उसका अत्यन्ताद्भुत चरित्र भी उनके द्वारा श्रवण कर लिया गया था तथा जिस कारण से विघ्न उपस्थित हुआ था वह भी विश्वकारण के मुख से उनके श्रुतिपथ पर अवतरित हो चुका था। अब वह निजचित्त में उत्पन्न सन्देह के निवारणार्थ गणेश में गजमुखसंयोजन के हेतु का श्रवण करने के इच्छुक थे। नारद ने नारायण से आगे कहा कि नानाविध जन्तुओं के विद्यमान होने पर भी हाथी के मुख के संयोजन का कारण जानने के लिए वह अत्यंत उत्सुक थे।[12]

नारद के प्रश्नों का उत्तर देते हुए नारायण ने कहा कि गजमुख के योजन का कारण समस्त पुराणों और वेदों में गोपनीय और अत्यन्त दुर्लभ है। यह चरित्र समस्त दुःखों का तारक, सभी सम्पत्तियों का प्रदाता, विपत्तियों और पापों का हर्त्ता है।[13] महालक्ष्मी का चरित्र सर्वमंगलप्रद, सुख और मोक्षदायक तथा चतुर्वर्ग फल प्राप्ति का साधन है।[14]

नारायण ने नारद को गजमुख योजनविषयक पुरातनेतिहास का वर्णन करते हुए कहा कि एकदा महेन्द्र महान् सम्पदा के मद से उन्मत, कामी और राजश्रीसंयुत होकर पुष्पभद्रानदी के तट पर गये। जहाँ जीवजन्तुशून्य एकान्त स्थान में मनोहर पुष्पोद्यान में अतीव दुर्गम कानन था। वहाँ भ्रमर और कोयल की मधुर–ध्वनि से युक्त तथा सुगन्धित पुष्पों की सुगन्ध से मिश्रित वायु के द्वारा सर्वत्र सुगन्ध का संचार किया जा रहा था। उस पुष्पोद्यान में चन्द्रलोक से अवतरित रम्भाप्सरा का इन्द्र ने दर्शन किया तथा उसके कटाक्षपात से वह अत्यन्त कामोत्पीड़ित हो गये। अतीन्द्रिय का चंचलता के कारण इन्द्र ने उस अप्सरा से कहा कि वह कहाँ जा रही थी। उसके दर्शन का लाभ उन्हें चिरकाल पश्चात् प्राप्त हुआ था। वह उसके अन्वेषणकर्त्ता थे तथा उनका मन उसमें अनुरक्त होने के कारण वह अन्य किसी की कामना नहीं करते थे। इन्द्र के एवंविध वचनों का श्रवण कर रम्भा ने कहा कि कौन सी ऐसी मूढ़मति नारी होगी जो उन जैसे गुणसागर की इच्छा नहीं करेगी। यह कहकर स्मितयुक्त रम्भा ने वक्र नेत्रों से इन्द्र का पान किया तथा कामपीड़ा से पीड़ित वह लज्जित होकर उनके सन्निकट स्थित हो गई। तदनन्तर वे दोनों परस्पर जल–विहार में सलंग्न हुए। उन्होंने जल से स्थल में तथा स्थल से जल में पुनः–पुनः विहार किया।[15]

उसी समय मुनिपुङ्गव दुर्वासा निज शिष्यगणसहित उसी मार्ग से वैकुण्ठ से शंकरालय कैलाश की ओर गमन कर रहे थे। महर्षि दुर्वासा के दर्शन कर इन्द्र स्तब्ध हो गये तथा उन्होंने सहसा महामुनि को नमस्कार किया। महर्षि से उन्हें शुभाशीष प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् नारायण–प्रदत्त पारिजातप्रसून को महाभाग मुनीन्द्र ने प्रसन्न होकर इन्द्र को प्रदान किया। कृपा–निधान मुनिश्रेष्ठ ने उस पुष्प को देने के अनन्तर उसका माहात्म्य इन्द्र को बताया कि नारायणनिवेदित यह कुसुम सभी विघ्नों का हरण करने वाला था। जिसके मस्तक पर यह स्थापित होगा उसकी सर्वतः जय होगी और साथ ही देवों में अग्रणी होकर अग्राराधना का पात्र भी बनेगा। विष्णुप्रिया छायासदृश उसका कभी त्याग नहीं करेगी। वह ज्ञान, तेज, बुद्धि, पराक्रम और बल में सदैव हरिवत् और समस्त देवों से बढ़कर होगा। एतद्विपरीत यदि किसी नराधम द्वारा हरि के इस नैवेद्यस्वरूप पारिजात को अहंकारवशात् भक्तिभावपूर्वक मस्तक पर धारण नहीं किया जाएगा, वह श्रीहीन हो जाएगा। इतना कहकर वह शंकरांश महर्षि दुर्वासा की ओर प्रस्थान कर गए।[16]

देवेन्द्र ने उस परिजात को स्वशिर पर ग्रहण न करके रम्भाप्सरा के निकटवर्ती गजमस्तक पर प्रक्षिप्त कर दिया जिसके फलस्वरूप सुरेश्वर श्रीहीन हो गए। ऐसा होने पर रम्भा ने उनका त्याग कर दिया और वह सुरसदन को चली गई क्योंकि चंचला, अधमा और पुंश्चली स्त्री तो योग्य पुरुष की ही कामना करती है, अन्य की नहीं। तत्पश्चात् वह महाबली गजराज भी इन्द्र का परित्याग करके महारण्य में प्रविष्ट हो गया जहाँ वह प्रमत्त गज किसी हथिनी को प्राप्त कर बलात् उसके साथ संभोग करने में प्रवृत्त हो गया। वह स्त्रीजातीय हथिनी भी कामसुखेच्छावशात् उसके अधीन हो गई। उस अरण्य में उनकी संतति का समूह उत्पन्न हुआ। हरि ने उसी गज का मस्तक काटकर बालक (गणेश) के तन पर संयोजित किया था। इस प्रकार गणेश के गजमुखायोजन का कारण नारायण ने नारद को बताया।[17] यह रहस्य महान् पापों का हरण करने वाला है।[18] गजमुख–संयोजन से ही गणेश गजानन, गजवक्त्र और गजमुख कहलाए।

प्रस्तावना

1. शि.म.पु. (रु.सं.), 4/16/1–10.
2. शि.म.पु. (रु.सं.), 4/16/11–27.
3. वही, 4/16/28–37.
4. शि.म.पु. (रु.सं.), 4/17/1–18.
5. शि.म.पु. (रु.सं.), 4/17/19–34.
6. वही, 4/17/35–47.
7. शि.म.पु. (रु.सं.), 4/17/48–59.
8. ब्र.वै.पु., 3/12/1–5 (पूर्वार्ध).
9. सव्यलोचनकोणेन ददर्श च शिशोर्मुखम्।।
   शनेश्च दृष्टिमात्रेण चिच्छिदे मस्तकं मुने।।
   चक्षुर्निमीलयामास तस्थौ नम्राननः शनिः।। वही, 3/12/5 (उत्तरार्ध)–6.
10. ब्र.वै.पु., 3/12/7–9.
11. वही, 3/12/10–22.
12. ब्र.वै.पु., 3/20/1–4.
13. गजास्य योजनायाश्च कारणं शृणु नारद। गोप्यं सर्वपुराणेषु वेदेषु च सुदुर्लभम्।।
   तारणं सर्वदुःखानां कारणं सर्वसम्पदाम्। हारणं विपदां चैव रहस्यं पापमोचनम्।। वही, 3/20/5–6.
14. वही, 3/20/7.
15. वही, 3/20/8–49.
16. ब्र.वै.पु., 3/20/50–57.
17. वही, 3/20/58–62 (पूर्वार्ध).
18. गजस्य योजनायाश्च कारणं पापनाशनम्।। वही, 3/20/62 (उत्तरार्ध).